मनुष्य बनो

7/85

वा० मु
१०-०

शरणागति, शुभ संकल्प,

क्षमा, प्रेम,

निष्काम कर्म, ब्रह्मचर्य पाल

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़। उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
...ारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महार...

...घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेर... ...विवरण के अनुसार सही है।

...ान,

४

सुधा मितल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

R. S.

ओ३म पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष ३३	आषाढ़ संवत २०४० वि०	अङ्क ९

प्रार्थना

साधो एक रूप सब माहीं ।
अपने मनहिं विचारि के देखो, और दूसरी नाहीं ।।टेक।।

एकै तुचा रुधिर पुनि एकै, विप्र सूद्र के माहीं ।
कहीं नारी कहिं नर होइ बोले, गैब पुरुष वह आहीं ।.१।।

आपै गुरु होय मंत्र देत हैं, शिष होय सबै सुनाहीं ।
जो जस गहै लहै तस मारग, तिनके सतगुरु आहीं ।।२।।

शब्द पुकार सत्त में भाषौं, अन्तर राखों नाहीं ।
कहैं कबीर ज्ञान जेहि निर्मल, बिरले ताहि लखाही ।।३।।

=×=

साखी

१ कबीर ! भेदी भक्त सों, मेरा मन पतियाय ।
भक्ति-भाव जाने नहीं, ता सों मिले बलाय ॥
२ महरम मिले जो भेद का, तासों कहिये भेद ।
मर्म भेद जाने नहीं, तासों उपजे खेद ॥
३ अधिकारी सब कुछ लखे, बिन अधिकार न कोय ।
संस्कार उर में बसे, अधिकारी है सोय ॥

सृष्टि में प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक वस्तु का अधिकारी नहीं है। विशेष मनुष्यों के विशेष अधिकार होते हैं। सृष्टि में इस नियम का व्यवहार हर जगह दिखलाई देता है। पढ़ने-लिखने, काम काज और व्यवहार के विषय में मनुष्य के स्वभाव का ध्यान रखना आवश्यक है। जो मनुष्य जिसका ग्राहक हो वही वस्तु उसको दी जाये तो वह उसका सत्कार करेगा और जो जिसका ग्राहक ही नहीं है वह सतकार करना तो दूर रहा फूटी आँख से भी देखना पसन्द न करेगा। संसार में देखो कोई सुगन्धि का प्रेमी है, कोई फल खाता है, कोई फूल खाता है, कोई-कोई पत्ते चबाते है, किसी किसी का आहार छाल लकड़ी और हीर है। ठीक इसी प्रकार कार---बार के विषय में समझान चाहिये। जिस बात का अधिकार होगा वह उसी को पसन्द भी करेगा। अधिकार और संस्कार समतानुसार शिक्षा, उपदेश, संगत और मेल जोल से उभर खड़े होते हैं परन्तु जो अधिकारी हैं वही इधर ध्यान देते हैं।

तेली का काम तमोली नहीं कर सकता, जौहरी और पारखी का साग भाजी वेचने वाला कुँजड़ा क्या जाने ! उच्च हृदय वाले मनुष्य से भलमनसाहत का काम नहीं होता। जैसे

बुरे मनुष्यों के चित्त से बुराई नहीं जाती वैसे ही अच्छे लोगों के हृदय में बुराई भी नहीं आती।

पहिले मनुष्य के अधिकार और संस्कार को देखकर तब उसी के अनुसार उसे उपदेश देना चाहिये। फिर सफलता अवश्य ही प्राप्त होगी। यदि ऐसा न किया गया असफलता में क्या सन्देह हो सकता है। सब धान बारह पंनसेरी नहीं बिकते। बासमती चावल सूक्ष्म स्वभाव वालों का आहार है। मुँजी चावल को स्थूल स्वभाव वाले पसन्द करते हैं। जो जैसा हैं वह वैसे हा आहार की खोज में रहता है।

यही बात ऊँचे नीचे भावों, निर्पक्षता और हठधर्मी के बिषय में भी है। उच्च भाव वाले के हृदय में नीचे भाव नहीं आते। इसी प्रकार हठधर्मी और पक्षपाती मनुष्य से निष्पक्षता की आशा नहीं की जा सकती। जो जैसा है उसका व्यवहार और विचार बैसा ही होगा।

हमारा शिव भी उन्ही सज्जनो के लिये सम्पादन किया जाता है जिन में प्रेम और भक्ति भाव का संस्कार है। जिनको भक्ति भाव में रस आता है, जो प्रेम की वेदी पर वलिदान होने के लिये बराबर तैयार रहते हैं, जिन्होंने प्रेम तत्व को समझ लिया है केवल वही शिव के वचन और सतसंग से विशेष लाभ उठाते हैं। जिनमें भक्ति भाव का संस्कार ही नही है उनके विषय में क्या कहा जाये।

साध सिंह का एक मत, जीवत ही को खाँय।
भाव हीन मृतक दशा, जिनके निकट न जाय॥

अब सवाल यह है कि कोई अपना कितना समय सर्व साधारण की सेवा के लिये दे सकता है, कितना धन द्रव्य इस काम

में लगा सकता है तथा तन, मन, धन इसके लिये अर्पण कर सकता है ? यदि यह गुण किसी में हैं तब यह लेखों का सिल-सिला बहुत ही बहुमूल्य और लाभदायक सिद्ध होगा और यदि यह नहीं है तो—

"भैंस के आगे बीन बाजे, भैंस बैठ पगुराय
अन्धे के आगे रोवे, अपना दोदा खोये"

अन्धों को दरपन दिखलाना। व्यर्थ काम चित्त में लाना। खर कूकर सी गति है तिनकी। नीच और मलिन भावना जिनकी।

इस नम्बर में इन्हीं सब बिषयों के मर्म, भेद और सार इकठठा किये गये है। आशा है हमारे पाठक गण अपने काम की बहुत सी बातें इन में से ढूँढ निकालेंगे और उन से लाभ उठा कर हमारे परिश्रम को भी सफल करेंगे।

दोहे

१ नाम रतन की खान हैं, सदा खुली घट माँह।
सेंत मेंत ही देत हूं, गाहक कोई नाँह॥

२ गावनिया के मुख बसूँ, और श्रोता के कान।
ज्ञानी का मैं ज्ञान हूं, भेदी का मैं प्रान॥

३ वस्तु कहीं ढूँढे कहीं, केहि विधि आवे हाथ।
कहैं कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजे साथ॥

४ भेदो लिया साथ कर, दीनी वस्तु लखाय।
कोटि जन्म का पन्थ था, पल में पहुंचा जाय॥

····×····

सतङ्ग

[उज्जैन कुम्भ ७-५-६८]

धर्म

मैं ब्राह्मण होने के नाते सोचता हूं कि क्या मैं पथ भ्रष्ट हो गया । मेरी आत्मा कहती है 'नहीं' । यह संत मत तथा इस समय जितने भी पंथ सम्प्रदाय हैं, यह सब सनातन धर्म की शाखायें हैं । सबकी बुनियाद (जड़) वासना पर है । वासना से कर्ता पुरुष ने संसार की रचना की और वासना ही का खेल है । इसलिये मैं किसी सम्प्रदाय, पंथ तथा किसी विचारधारा को, चाहे वह इस्लाम है, हिन्दू धर्म है, सिक्ख धर्म है, आर्य समाज है बुद्ध या जैन धर्म है अर्थात सबको ही सनातन धर्म या मानव धर्म में ही मानता हूं । सब ने अपनी वासना को ठीक करने के लिये, अपने इस जन्म को सुखी और अगले जन्म को सुखी करने के लिये काम किया । अब प्रश्न इतना शेष है कि जो वासना (विचाराधारा) एक मजहब या सम्प्रदाय ने की, दूसरा उसका खण्डन करता है । यह अज्ञान और भ्रम है ।

मैंने सनातन धर्म की जै बोल करके अपने अनुभव को दो दिन सत्संग में वर्णन किया । सनातन धर्म में धर्म का लक्षण:—

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छोड़िये, जब लग घट में प्रान ॥

अब दया और धर्म दो वस्तुयें हैं । धर्म एक विशेष सिद्धान्त या नियम है जो हम जीवन में अपने सुख के लिये धारण करते हैं । उसमें अब तक दया सम्मिलित नहीं होती, तब तक जीवन सुख से व्यतीत नहीं हो सकता । मैं राधास्वामी

॥ मनुष्य बनो ॥

मत का, कबीर मत का, दादू व पलटू मत का अनुयायी हूं। इनमें सबसे अधिक उच्च पदवी के कबीर हुए हैं। आज मैं आपको कबीर सहाब का शब्द सुनाता हूं, जिसमें उन्होने लिखा है कि जब तक मनुष्य दया और धर्म नहीं पालता, तब तक उसको सत नाम की प्राप्ति नहीं हो सकती। न निर्वाण को प्राप्त कर सकता है और न मोक्ष को। वह शब्द हैं :—

अब में भूला रे भाई, मेरे सतगुरु जुगत लखाई।
किरया कर्म आचार मैं छांड़ा, छाँड़ा तीर्थ का न्हाना ॥
सगरी दुनियाँ भई सयानी, मैं ही एक बौराना।
ना मैं जानूं सेव बन्दगी, ना मैं घण्ट बजाई ॥
ना मैं मूरति धरी सिंहासन, ना मैं पहुप चढ़ाई।
जो यह मूरत मुख से बोले, कर स्नान न्हवाई ॥
पाँच टका हों देत ठठेरे, एकहि हों ले आई।
ना हरि रीझे जप तप कीन्हे, ना काया के जारे ॥
ना हरि रीझे धोती छांडे ना पांचों के के मारे।
दाया रख धर्म को पाले, जग में रहे उदासी।
अपना सा जिव सबका जाने ताहि मिले अविनासी ॥
सहे कुशब्द बाद को त्यागे, छांडे गर्व गुमाना।
सत नाम ताहि को मिलिहै, कहै कबीर सुजाना ॥

संतों में जो आदि संत कबीर हुए हैं उन्होंने यह शर्त लगाई है कि जब तक दया रखकर धर्म को नहीं पालते और अपने समान सब को एक जैसा मनुष्य नहीं समझते, जब तक दूसरों के कड़ुवे बचनों को तुम में सहन करने की शक्ति नहीं है, तुमको सतनाम नहीं मिल सकता। न तुम अपने घर जा सकते हो। यही शर्त सनातन धर्म कहता है। धर्म तुम्हारी रक्षा करता है। इस धर्म को पालो।

अब सबाल होता है कि धर्म क्या हैं ? धर्म वह काम हैं, तुम्हारे वह कर्त्तव्य कर्म हैं हमारे ऊपर वह जिम्मेदारियां हैं जो हमको इस दुनियाँ में पैदा होने के बाद—माँ बाप का धर्म, भाई का धर्म, राजा का धर्म प्रजा का धर्म, पालन नहीं करनी हैं। हमारे खास—खास सिद्धान्त हैं । जब तक कोई आदमी अपने धर्म को दया रखकर नहीं पालता, वह इस गति को प्राप्त नहीं हो सकता । अब एक जवान लड़का है । उसको परमार्थ का शौक हो गया । बूढ़ी मां है, उसका कोई सहारा नहीं । उसको वह छोड़ कर बाबा फकीर का या किसी और महन्त का चेला बन जाता है । क्या उसने धर्म को पाला ? नहीं । यदि वह मनुष्य कबीर या सनातन धर्म के अनुसार यह आशा करे कि उसने अपनी बूढ़ी माँ को छोड़ दिया है और सन्यासी हो गया है, गुरु महाराज से नाम ले लिया है उसको सतनाम की प्राप्ति हो जायगी, उसको सतनाम नहीं मिल सकता है, क्योंकि उसने अपने धर्म को नहीं पाला । एक आदमी उसने विवाह कराया, स्त्री को छोड़कर भाग गया, साधु बन गया और गेरुये कपड़े पहन लिये तो उसने धर्म को नहीं निभाया । यह धर्म का एक अंग है । दूसरा धर्म क्या है ? वह वह है कि हमको अपनी जीविका कमानी चाहिये । हमको हाथ मिले हैं, कान मिले हैं टांगें मिली हैं, शरीर मिला है । जो अपनी रोटी कमाकर नहीं खाता वह अपने धर्म को नहीं निभाता । यह जितने आदमी तुम आजकल के साधु देखते हो, यह केवल माँगकर खाने वाले साधु हैं । मैं समझता हूँ कि इनमें कोई भी सतधाम को नही जा सकता । शायद जाता हो मगर कबीर के कथानुसार कह रहा हूँ । मुझे पता नहीं जाते हैं या नहीं, मगर उन्हने अपने धर्म को नहीं पाला । जो स्त्री अपने घर के काम को पूरी तरह नहीं

सम्हालती, पति के भोजन का समय आया और आप सत्संगों में फिरती हैं, उसने अपने पति की सेवा नहीं की। क्या उसे सत-नाम मिल जायेगा ? कबीर के कहने के अनुसार यह है कि जो अपने कर्त्तव्य को पूरा कर जाता हैं, उसको शान्ति मिलती है, उसको साहस रहता है संतोष रहता है। अपने धर्म को पालने का मैं यह अर्थ समझाता हूं। अब मैं गृहस्थियों का गुरु हूँ।

अब रह गई दया—तुम कितनों पर दया करते रहोगे। तुम को दया करने का अवसर गृहस्थ में मिला है। तुम्हारे बच्चे हैं यह गलती करते हैं। तुमको क्रोध आता है। तुम्हारी स्त्री गलती करती है। तुम उसको मारते हो। तुम में दया कहाँ आई ? गृहस्थ मैं रहते हुए अपने रिस्तेदारों की गलतियों को जाना, उसको क्षमा करना, उन पर अनुचित क्रोध न करना, यह दया है। तुम्हारे घर में पुत्र वधू आयी। वह सीधी सादो है। सास ताने देती है। उसको तंग करती है। फिर सास यह दावा करती है कि मैं बाबा फकीर की चेली हूँ, गलत है। उस को कुछ नहीं मिलता। दया का अर्थ यही है जो ऊपर बताया गया है। गृहस्थियों को दया करने का बडा अवसर है। साधुओं के पास दया करने का कोई अवसर नहीं है कि अपने धर्म को पाल सकें या दया कर सकें। यह हमारा गृहस्थ है। इसमें हम दयावान हो सकते हैं मैंने आपको दया का रूप बता दिया। तुम्हारे घर में कलह रहती, झगड़े रहते है। तो कबीर कहता है दया रक्खो। क्या दया ? बच्चे गलती खाते हैं उनके कसूरों को क्षमा करो। तुम्हारे हृदय में क्रोध न आये। किसी को अनुचित मारो नहीं। तंग न करो, मान लो कि तुम्हारा अपमान होता है। छोटे बच्चे हैं, जरा सी गलती करते हैं। तुम उनको मुक्के मारते हो, टांगें मारते हो, तुममें फिर दया कहां आई ? दया

और धर्म की परीक्षा यदि कोई कर सकता है तो गृहस्थी कर सकता है ।

मैं गृहस्थी हूं। यह तुम्हारा बड़प्पन है कि भेषधारी साधु तुम्हारे द्वार से भीख मांगते है और इनका व्यवहार है कि एक तो हम से खाते हैं। और हमसे ही गुर्राते हैं। श्राप देने का भय दिखाते हैं । मैं एक जगह गया। वहां एक स्त्री आई। मुझे कहती है बाबाजी ! बड़ी गरीब हूं। मैंने एक आदमी को कहा इसको दस रुपया मासिक दे दिया करो। उसके दो तीन बच्चे थे। वह कहती थी कि हमारे गुरु महाराज नंगल में हैं। वह आया करते हैं। वह कहते हैं कि चार रुपये रख दे ! मेरे पास होते नहीं तो मैं हाथ जोड़ती हूं, तो वह कहते हैं कि श्राप दे दुंगा । मैं इस गलत गुरुइज्म के खिलाफ उठा हूं। तुम गृहस्थी हो। तुम गृहस्थी में रहते हुए दया और धर्म को पाल सकते हो, जो साधु जंगल में रहते हैं वह दया और धर्म कीं नहीं पाल सकते। तुमको अवसर मिला दया का पाठ पढ़ने के लिये। तुम को अवसर मिला है कि अपने धर्म को निभाने के लिये। इस लिये गृहस्थ आश्रम से तुम्हारी मोक्ष हो सकती है। गृहस्थ ही निर्वाण को प्राप्त कर सकता है। निर्वाण है क्या ? शान्ति, बेफिक्री, बेगमी, भ्रमों का नाश। कबीर ने कहा है—

दया राख धर्म को पाले, जग में रहे उदासो।
अपना सा जिव सबका जाने, ताहि मिले अविनासो ।।

सबका जी ! तुम सारी दुनियां को अपना कैसे बना सकते हो ! तुम वह व्यवहार अपने सबन्धियों के साथ न करो, जो तुम चाहते हो कि तुम्हारे सम्बन्धी तुम्हारे साथ न करें यदि तुम चाहते हो कि स्त्री तुम्हारा सम्मान करे तो तुम उस का सम्मान करो । यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा भाई इज्जत

करे तो तुम भाई की इज्जत करो। यदि तुम चाहते कि तुम्हारा भाई आपत्ति के समय तुम्हारी सहायता करे तो भाई को आपत्ति के समय तुम सहायता करो। जब तुमको कोई मारता है तो तुमको पीड़ा होती है तो तुम क्यों दूसरों को व्यर्थ मारते हो ! उनको भी पीड़ा होती है। यह भाव है कि अपना सा जो सबका जानो। तुम गृहस्थी हो। गृहस्थ का जीवन महा कठिन है। यदि गृहस्थ को गुरु नहीं मिला कि गृहस्थ जीवन कैसे काटना है तो यह हमारे लिये दुखदाई हो जाता है। मेरी स्त्री थी। जब कोई स्त्री मेरे पास आती गुरु समझ के, वह कहा करती कि मालुम हो गया तू स्त्री से दुखी हैं। साधु महात्माओं के पास अधिकतर वही जाते हैं जिनका गृहस्थ सुखी नहीं है। बात मैं आपको सच्ची कहता हूं। जिसका गृहस्थ जीवन अच्छा है उसको साधु महात्माओं के पास अधिक जाने की क्या आवश्यकता है ! क्योंकि मन को शान्ति चाहिये। मन को शान्ति कब मिलेगी ? जब तुम दया भाव धार करके अपने धर्म को पालोगे और अपने बाल बच्चों तथा परिवार की निष्काम सेवा करोगे।

मैं गृहस्थी हूं। में तुमको सच्ची बात कहता हूं। तुम लोगों को सब ने मूर्ख बनाया हुआ है। गवर्नमेंट भी तुम पर टैक्स लगाती है। महात्मा लोग आते हैं ये भी तुम पर टैक्स लगाते हैं। गवर्नमेंट तुमको धमकाती है, डराती है और हम साधु महात्मा भी तुमको डराते हैं, तुमको लूटते हैं क्योंकि तुमको जानकारी नहीं है कि तुमको रहना कैसे है। यह माइयाँ सत्संग में आई हैं। इनको मैं यदि सतलोक की बातें सुनाऊँ तो क्या यह समझेंगी। गांव के लोग आते हैं। अब उनको मैं सतलोक की बात कहूं, योग की बातें कहूं तो वह मेरी बात को क्या

समझेंगे। यह नहीं कि योग गलत है मगर जब जैसा अधिकार होता है वैसी बात कहना ठीक है। माइयाँ आई हैं। मैं चाहता हूं कि तुम लोगों का गृहस्थ ठीक हो जाय। घर में शान्ति रक्खो। जिस घर में कलह है वहाँ--

जिस घर कलह कलकर बसे।
उस घर घड़ों पानी नसे ॥

जहाँ सुमति तहं, सब सुख नाना।
जहाँ कुमति तहं, विपति निदाना ॥

मेरे एक पुराने मित्र है। उसकी स्त्री की और उसकी बहू को नहीं बनती, यद्यपि वह साधु स्वभाव का है। हम ३५—३६ साल से मित्र है। वह भी अपने बाप का इकलौता लड़का है और उसका लड़का भी एक ही है। उस लड़के का भी एक ही लड़का है। कभी वह आया करता था कि मित्र ! तुम पर ओई न कोई आपत्ति आयेगी। और आपत्ति आगई। उसका एक ही पोता था वह मर गया। यह मेरे जीवन के अनुभव है। मेरी सगी साली थी। उसकी सास के साथ नहीं बनती थी। मैं कभी घर में जाया करता था। अपनी साली को कहता बेटी ! तू दुखी होगी कुछ होश कर। मगर सुनता कोंन है ! परिणाम यह हुआ कि डाका पडा। सब कुछ चला गया। पति पाँच वर्ष दमा के रोग मे बीमार रहकर मर गया। उसको भी टी०बी हो गई ओर टी० बी० में मर गई। यह मेरे जीवन के अनुभव है। मैंने यहाँ यह स्वांग नहीं बनाया। मुझ पर गुरु ऋण है। मेरे जिम्मे मेरा धर्म है। मेरा धर्म क्या है ?

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा।

तीन ताप से जीव दुखी हैं, निवल अबल अज्ञानी ।
तेरा काम दया का भाई, नामदान दे दानी ।।

तुम लोग अज्ञानी हो । मैं स्वयं अज्ञानी था । मेरी अपनी स्त्री से नहीं बनती थी छोटी उम्र में जब मेरी शादी हुई, मेरा अपना ही दोष था । एक गलत ख्याल मैंने मन में ले लिया था । मन मेरा अपना ही था । मैंने अपने आप ही यह समझ लिया कि मेरा उसका स्वभाव नहीं मिलेगा । हम अपने ख्याल से या गलत फहमी से एक दूसरे को बुरा सझमने लग जाते हैं । दूसरा सम्बन्धी बुरा नहीं होता । हम अपने ही भाव से अपने ही विचार से उसको या दूसरे को बुरा समझ लेते हैं । हँसी की बात बताता हूं । मेरा जब विवाह हुआ, मुझको आध्यात्म का ख्याल था । संस्कार था । मैंने सुना हुआ था कि जैसा नाम वैसा प्रभाव मनुष्य पर पडता है । जब पहली बार विवाह होता है तो लड़की को लड़के का मुंह दिखाते है । एक बार कहते हैं कि नाम लेलो । जब मैंने अपनी स्त्री का चेहरा देखा तो उन्होंने उसका नाम बताया । गाँव वालों ने उसका नाम रक्खा हुआ था क्रोधो ! क्रोधो का अर्थ क्रोध करने वाला या क्रोध करने वाली । तो मेरे दिल में एक ख्याल बैठ गया कि जिसका नाम ही क्रोधी रक्खा हुआ है उसमें क्रोध होगा । मेरी उसकी कैसे बनेगी ? वह जो मेरा अपना ही ख्याल था उसी ख्याल ने मुझको अपना ताना बान तनाया और दुखी रहने लगा । दातादयाल (महर्षि शिव) को अपना दुखड़ा सुनाया । वह गुरु थे । उन्होंने दो शब्द लिखे । मेरी स्त्री का नाम फिर रख दिया भाग्यवती ।

भाग्यवती जब भाग में आई ,
अब भागन में कौन कौन भलाई ।।
वीर समान धर्म को पाल ।

मौज करेगी आप संभाल ।।

तू धर्म को पाल ! उस दिन से ही मेरा मन स्वच्छ होगया । हम दोनों ने अपना जीवन बड़ा अच्छा बिताया । धर्म का पालना क्या हैं ? निष्काम सेवा, अपने कर्त्तव्य को निभाना । हम अपने ही विचार से किसी को बुरा समझ लेते है, चाहे दूसरा बुरा हो या न हो । तो सनातन धर्म कहता है । अपने धर्म को पालो और दया का भाव मन में रक्खो ।

दया पालन क्या है ? तुममें से कई आदमी ऐसे भी होंगे जो अपनी स्त्रियों से दुखी होंगे । कई ऐसी स्त्री भी होंगी जो अपने पति से दुखी होंगी । सोचता हूं इनका क्या इलाज हैं ? मेरे पास सब दुखड़ा रोने वाले आते हैं । स्त्री का कर्त्तव्य है कि पति की गलतियों को सहन करती हुई अपने धर्म का पालन करती रहे । पति की गलतियों को भूलता हुआ अपने कर्त्तव्य को पूरा करता रहे । जो गलत फहमियाँ (Mis-understanding) हों एक दूसरे की, उनको आपस में प्रेमभाव से दूर कर दिया करें । मैंने कबीर के कथानुसार तुम से कहा कि जब तक तुम्हारा यह सांसारिक जीवन सुखी नहीं, तुम मरने के बाद कभी भी परमार्थ सुख प्राप्त नहीं कर सकते ! नही कर सकते !! नहीं कर सकते !!!

जाको दर्शन इत्त है, ताको दर्शन उत्त ।
जाको दर्शन इत्त नहीं, ताको इत्त न उत्त ।।

मैंने अपना धर्म निभाया । अब मुझे धर्म निभाने से क्या मिला ? मुझे शान्ति मिली लड़की अपने घर सुखी हैं । लडका अपने घर सुखी है । स्त्री जब तक जीवित रही मैंने उस की सेवा की । छः वर्ष बीमार रही । सेवा करता रहा । जो आदमी अपने धर्म को नहीं निभाता, वह पार नहीं जा सकता । इसलिये

।। मनुष्य बनो ।

ऐ गृहस्थियो ! अपने अपने धर्म को निभाओ । यदि तुमने अपने कर्तव्य कर्म को पूरा नहीं किया तो जो काम जिम्मे था तुमने नहीं किया । उसका तुम्हारे मन पर अफसोस रहेगा । जब तुम मरने लगोगे तो वह जो प्रतिज्ञायें या जो जो ड्यूटियाँ तुमको पूरी करनी थीं तुमने नहीं की, वह तुमको सतायेंगी । तुमको किसी का ऋण देना है । जब तुम्हारा अन्त समय आयेगा, वह देने का ख्याल तुम्हारे दिमाग में रहेगा । परलोक है क्या ? तुम्हारे इस के नक्से का चिठठा है । इसलिये धर्म को पालो । वही कड़ी है—

दया राख धर्म को पाले, जग में रहे उदासी ।
अपना सा निज सबका जाने, ताहि मिले अविनासी ।।

सनातन धर्म क्या कहता है ?

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छाँडिये, जब लग घट में प्रान ।।

सनातन धर्म कहता है कि अपने धर्म को पालो । मैं निर्भय होकर कहे जाता हूं कि जिन जिन लोगों ने युवकों ने अपनी स्त्रियों को छोड़ा, मां बाप को छोडा, कमारा छोडा, इसलिये साधु हो गये कि रोटी हमें मुफ्त मिलेगी, वह मनुष्य नहीं है । मनुष्य का पहिला धर्म यह है कि पराधीन होकर न रहे ।

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ।
कर विचार देखो मन माहीं ।।

एक नौजवान बड़का जवानी पर आकर यदि बाप की कमाई पर निर्भर रहता है वह मनुष्य नहीं है । एक युवक स्वयं नहीं कमाता अपने बड़े भाई की कमाई पर निर्भर है वह मनुष्य नहीं है । पिछला समय गया जब घर के सात होते थे

और एक कमाता था और छः खाते थे। अब सात के सात कमायें तब भी पेट नहीं भरता। इसलिये हर एक आदमी का पहिला धर्म यह है कि वह अपनी रोटी कमाये। राम राम जपना, वह और मार्ग है। अपनी जीविका कमाकर खाओ। कितने घरों के दुखड़े हैं मैं क्या कहूं। लडका कमाता नहीं, विवाह उसका कर दिया। बाप उसका दुखी है। तो घरों की शान्ति के लिये धर्म है और दया है। एक बाप ने चार पाँच बच्चे पैदा किये। अब यदि बाप यह आशा करे कि लडके जो कमाते हैं सब उसको दें, यह बाप की गलती है। बाप ने केवल लडकों को पढ़ाया लिखाया। अपने पाँव पर खडा कर दिया। लडकों का धर्म है कि बाप का स्वास्थ्य, भोजन कपड़े आराम का ख्याल रक्खे। इससे अधिक यदि कोई बाप अपने लड़के से लेके खाता है, दान पुण्य करता है, वह अधर्मी है। इस समय गृहस्थियों का जीवन कष्ट में है। तुम लैक्चरों को सुनते हो! मैं गृहस्थियों का गुरु हूँ। गृहस्थी किस तरह सुख से रह सकते हैं वह बताता हूं। हम तब ही सुखी रह सकते हैं जब हम मैं दया का भाव हो, हम अपने कर्त्तव्य का पालन करें। एक माई मेरे पास आई! उसके चार लड़के है, कमाते है। वह रुपया ले आई कहने लगी बाबाजी! मन्दिर के लिये यह लेलो। मैंने कहा मैं नहीं लेता। क्यों? तेरा कोई हक नहीं है अपने बच्चों से रुपया लेकर दान करे। यह मैं इसलिये कह रहा हूँ कि तुम्हारा लोक सुखी हो।

लोक सुखी परलोक सुहीले!

तुम यदि इस दुनियां में सुखी नहीं हो तो तुमको मरने के बाद सुख कहाँ मिलेगा! वह तो भगवान जानते हैं मिलता है

कि नहीं ! सनातन धर्म कहता है कि धर्म को पालो । धर्म क्या हैं ? तुम अपने कर्त्तव्य को पालो । लडका अपना धर्म पाले । बाप का धर्म यह है कि लड़के उसकी प्रकृति के अनुसार जितनी विद्या प्राप्त कर सकता हो उतनी दे । उसको अपने पाँव पर खडा कर दे और बस ! उसके लिये जायदाद बेशक मत छोडो । उसको अपने पाँव पर खडा कर दो । यह जो जायदाद छोडता है यह तुम्हारा मोह है । यह तुम्हारा धर्म नहीं । बाप का धर्म इतना ही हैं कि जिस सन्तान को पैदा किया है उसको योग्य बना दो । तुम उतनी सन्तान पैदा करो, जितने पाल सको ।

मैं सनातन धर्म के विषय में बोल रहा था कि सनातन धर्म क्या है ? धर्म को पालना और दया करना यह धर्म है । यही कबीर ने कहा है । अब यदि एक आदमी दया और धर्म को तो पालता नहीं, कानों में उँगलियां डालकर दो दो घण्टे समाधि लगाता है, वह कबीर के कथानुसार उस गति को प्राप्त नहीं स्कता । तुम कहोगे कि मुझको क्या मिल गया । तुम्हें क्या पता कि मुझे क्या मिला । यह दुनियां प्रोपोगन्डा करती है । हम लोग पाखण्ड का जाल बिछाते हैं । दो चार चेले चाँटे अपने साथ बना लिये, और दुनियां को लूटा गया । मैंने गुरु बनकर देखा है और चेला बनकर देखा है । हर जगह पाखण्ड है । हर जगह पर्दा है । इस पर्दे को जंजीर को मैंने उखाडा है । तुम लोगों की आंखों में मिटटी डाल डालकर बुरी तरह से लूटा गया है । मैं संसार में इस समय गुरु की हैसियत में प्रगट हुआ हूं और सच्चा ज्ञान देता हूं । यह कैसे कहता हूं ? तुमको मैं अपनी बात बताता हूं कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता । यह सब हमारे अपने मन का खेल है । इसी बात को पर्दे में रखने से

लुट गये। तुम्हारा अज्ञान है। यदि बाल बच्चे हैं तो तुम अपने धर्म को नहीं पालते किन्तु मोह में फँस जाते हो। धर्म मोह नहीं हैं। धर्म तो कर्त्तव्य हैं। मेरी स्त्री गुजर गई। तुम हैरान होगे कि मैंने उसकी इतनी सेवा की जिसका कोई हिसाब नहीं मगर मेरी आंख से आंसू नहीं गिरा। मेरे पिता जी गुजर गये। मेरी आँख से आँसू नहीं गिरे। मेरे गुरु महाराज छोड़ गये, मेरी आँख से आँसू नहीं गिरे, तद्यपि उनसे बड़ा प्रेम करता था। क्यों नहीं गिरे ? क्योंकि मुझे अपने कर्त्तव्य का या डयूटी का पता लग गया कि असलियत क्या है। तुम लोग मोह में आ जाते हो इसलिये दुखी हो। अपने कर्त्तव्य को पालो। अपने काम को करो। यह है सनातन धर्म का उपदेश। इस कड़ी में लिखा है :—

दाया राख धर्म पाले, जग से रहे उदासी।
अपना सा जिव सबका जाने, ताहि मिले अविनासी ॥

इस तरह जीवन व्यतीत करने से तुमको क्या मिलेगा ? शान्ति। जब अभ्यास मैं बैठोगे, मन लगेगा।

सहे कुशब्द बाद को त्यागे, छाँड गर्व गुमाना।
सत्त नाम ताही को मिलिहै, कहें कबीर सुजाना ॥

'सहे कुशब्द'- तुम घरों में रहते हो। सास ताना मारती है। यदि उनके ताने से तुम्हारे दिल में क्रोध नहीं आता तुम सतनाम के अधिकारी हो। बस, यह परीक्षा (Test) है। किसी ने कड़वा वचन कह दिया। यदि तुमने उसका बुरा नहीं माना, तुम्हारे दिल मैं शान्ति है तुम अधिकारी हो। यह साधु महात्मा, यह बैरागी लोग आते हैं यदि नागा आदि जब आते हैं तो उनमें गुत्थम गुत्था होती है और तुम गृहस्थियो ! इतने मूर्ख हो कि

उन साधुओं को जो आपस में डण्डे चलाते हैं, अपना मान चाहते हैं, तुम उनके आगे साष्टांग दण्डवत करते हो। अब क्या हुआ ? कई श्रद्धालु आदमियों ने मुझसे कहा कि नागा लोग इस साल क्यों नहीं आये ? ज्योतिषियों ने तो यह कहा कि अब सगठन है। नागाओं के जो गुरु हैं उन्होंने यह समझकर कि यहाँ शंकराचार्यो ने यह दिन नियत कर दिया है। यदि हम मान जायेंगे तो हम उनके आधीन हो जायेंगे। हमारा सिर उनके आगे झुक जायेगा। हम अगले वर्ष करेंगे। जब ऐसे तुम्हारे नागा हैं और यह साधु, जो किसी से अपने मान को ऊँचा रखना चाहते हैं तुम उनको साष्टांग दण्डवत करते हो। अपने बच्चों का पेट काट काटकर उन गुरुओं और उन महात्माओं के मुँह में देते हो। तुम्हारी बुद्धियाँ कहाँ गई ? मैं वक्त का गुरु हूं। मैं आया ही इसीलिये संसार में हूं! तुम से धन दौलत नहीं माँगता। मैं तुमको दुखी देखकर आया हूं।

तुमको दुखी देख आंखों से, दिल में दया समाई।
दया भाव ले प्रगटे जग में, दया यहाँ ले आई।।

यह समझना है कि मैं यहाँ तुम्हारे दरवाजे का कुत्ता बनकर आया हूं टुकड़े खाने के लिये। मैं यहाँ लाउडस्पीकरों पर यह नही कहता कि यहाँ दान दो।

कबीर कहता है कि गर्व गुमान तज दो।
सहे कुशब्द बाद को त्यागे, छांडे गर्व गुमाना।
सत्त नाम ताहि को मिलिहै, कहै कबीर सुजाना।।

उन लोगों से कैसे कोई आशा कर सकते हो जो अपना मान चाहते हैं, जो बडप्पन चाहते हैं, जो गदिदयों के लिये मुकददमा बाजी करते हैं कि नहीं ! क्या राधास्वामी मत वाले क्या निर्मल, सब मुकदमा बाजी करते है कि नहीं ! तो तुममें उनमें

क्या अन्तर है ? यदि तुम अपने घर संभाल लो, जैसा मैंने कहा तुम अपने घर में बच्चों से प्रेम रक्खो, उनको अपना जैसा जीव जानो तो परिणाम ये निकलेगा कि तुम्हारा मन शान्त रहेगा। तुम्हारा घर स्वर्ग बन जायगा। यह गृहस्थ का ऐसा आश्रम है, जहां हमारा यह सब का मुक्ति दाता है तो मैंने यह काम क्यों किया ? एक तो दातादयाल (महर्षि शिव) ने लिखा कि मैं इस आया हूं। एक यह साबूत है मेरे पास मेरे कर्म का। दूसरा यह है कि कई आदमियों की भृगुसंहिता में कुन्डली निकलीं। उनमें मेरे नाम का हवाला है।

एक लड़का पैदा हुआ। बाप उसकी कुण्डली ज्योतिषी पर ले गया। उसने कहा कि यह लडका किसी समय में द्वापर में कोई था। इसने गलतियाँ कीं गुरु धारण किया। इसके कर्म यहीं कटे। गुरु के पास गया। गुरु जी ने कहा कि कालियुग में एक ऐसा ऐसा महापुरुष, उसमें मेरा ताम छपा हुआ था, वह आयेगा। उसके प्रसाद से तू दुनियाँ में जन्म लेगा और तेरा कल्याण उसके प्रसाद से होगा। मैं नहीं कहता यह सत्य है या झूँठ है मगर वह जन्म पत्र मेरे पास आया था।

तुम मेरे भाई हो। तुमको सच्ची बात बताना चाहता हूं। क्या ? अपने ही सनातन धर्म को पालो। अपने बाल बच्चों से मीठा बोलो। प्रेम मय जीवन गुजारो। कठहोर वचनो को सहन करो। तो गुरु का काम है तुम को सच्चा ज्ञान देना। वही सनातन धर्म का ज्ञान है। इसी विषय पर दो दिन से बोलता हूं आज धर्म पर बोल रहा हूं। अपनी डयूटी को पूरा करो।

हम आये आये आये है।
तुमको दुखी देख आँखों से, मन में दया समाई।

दया रूप घर प्रगटे जग में, दया यहाँ ले आई ।।
सूरज दया का गगन प्रकाशा, किरणें दया की धारा ।
दला सिंधु उमगा और बाढ़ा, दया भाव विस्तारा ।।
सुर नर मुनि की यह रीती, लख स्वारथ करते सब प्रीती ।
हम में नहीं है स्वारथ किंचित, लख लेख करो प्रतीती ।।

यदि मुझे स्वार्थ होता तो मैं दूसरे गुरुओं की तरह चुप कर जाता कि मैं तुम्हारे अन्तर जाता हूं। मैंने (या मेरे रूप ने) लोगों को पुत्र दिये, तुम्हारा बेड़ा पार किया, मरते समय गया आदि आदि । यदि मुझे स्वार्थ होता तो कह देता कि हां मैंने सब किया मगर तुझ में कोई स्वार्थ नहीं है। तुम भूल भ्रम में आकर लूट गये। तुमको असलियत का पता नहीं।

उदर निमित्त धरें सब भेषा, जोगी जती उदासी ।
माँगें भीख ज्ञान की गम नहिं, तुम उनके विश्वासी ।।

संसार में रोटी का झगड़ा है। आज एक मुनि बाबा आये। ५० वर्ष से मुँह से नहीं बोलते कलम से लिखते हैं। यह क्या ? यदि वह मौन न रखते तो कोई उन्हें पूछता भी नहीं, कि कौन है। चूँकि मौन है, गरीब भोले भाले आदमी आये, यह समझ कर कि बड़े महात्मा है, किसी ने अन्न दिया किसी ने पैसा आदि ।

इस संसार में सब रोटी का झगड़ा है। हम गृहस्थी इन साधुओं से करोड़ों दर्जा अच्छे हैं जो प्रातः उठते हैं काम करते हैं। मैं आज दिन तक काम करता रहा, सिवाय इसके कि मैं पिछले वर्ष बीमार हो गया। स्टेशन मास्टरी की हालत में ईंट ढोई हैं। नम्बर कुली तरह काम किया है अपना पेट पाला है। पिछली उम्र में भी ५०) ६०) रु० मासिक पर एक रर मुनीमी

करता था। पेट पालता रहा। अब मेरा लडका पन्द्रह सौ रुपये मासिक पाता है। मैंने उससे यह नहीं कहा कि तुम मुझे इतना दो। मैंने कहा हुआ है कि जो तू उचित समझता है वह भेज दे। मुझे आवश्यकता नहीं। घर में शान्ति रखने के ख्याल से तुम गृहस्थियों को सीख दे रहा हूं। तुमको सनातन धर्म की जड़ बता रहा हूं। अपने धर्म को पालो। तुम देखो स्त्री के साथ धर्म को पालना है, मगर आजकल का धर्म है कि विवाह हुआ दूसरे दिन (Divorse) तलाक हो गई। स्त्री अगर सुन्दर नहीं है या उसने कहना नहीं माना, चल दिये अदालत में। स्त्री ने पति कर लिया पति ने स्त्री कर ली। धर्म पालना यह है कि पति लंगडा लूला हो गया। स्त्री ने जीवन भर साथ निभाया। वह स्त्री सतधाम को नहीं गई जिसने अपने धर्म को नहीं निभाया, चाहे वह बाबा फकीर की चेली क्यों न बन गई हो! सनातन धर्म कहता है अपने धर्म को निभाओ। अपने कष्ट सहो, दुख सहो मगर अपने धर्म को निभाओ। जिन-जिन भाईयों, बेटों ने बाप ने, अथवा नौकरों ने अपने धर्म को निभाया, तो यह कह सकता है कि मरने के बाद कहाँ गये, मगर वे दुनियां में यश ले गये।

धर्म क्या है? धर्म एक सिद्धान्त है हमारा, जो हमारे ऋषियों ने बतलाया। मातृ धर्म, पितृ धर्म, स्त्री धर्म, पति धर्म। हमारे कर्त्तव्य है हमारे धर्म में। इनको निभाओ, तब तुमको इस नाम का अधिकार मिलेगा। तब तुमको मोक्ष मिलेगो क्यों कि बिना धर्म के निभाये, बिना डयूटी पूरी किये, हमारे मन में चोर रहेगा। मैं तुमको आगे चलकर बताऊँगा कि सनातन धर्म क्या चीज है। इसकी शाखायें हैं। मैं आपको खास खास पौइन्ट बताता हूं जो आज का विषय है:—

भूल भरम तज कर सतसंगत, हिये की आँख खुलाओ।
राधास्वामी रूप निरखकर, दया से काज बनाओ॥

राधास्वामी तुम्हारा अपना रूप है।

राधा आदि सुरत का नाम।
स्वामी आदि शब्द पहिचान॥

दुनियाँ को समझ नहीं। व्यर्थ झगड़ों में फँसी हुई है। तुम्हारा जो निज स्वरूप है वही राधास्वामी है। जो सनातन धर्म कहता है वही कबीर कह गया। सनातन धर्म क्या कहता है? दया रक्खो और धर्म को पालो। कबीर भी अपने वचन में कह गया है :—

दया राख धर्म को पाले, जग से रहे उदासी।
अपना सा जिव सबका जाने, ताहि मिले अविनाशी॥

कैसे कहूँ कि कबीर सनातन धर्म के विरुद्ध था। जो सनातन धर्म ने कहा कि दया रक्खो और कबीर ने भी वही शर्त लगा दी कि मैं घण्टा बजाना नहीं जानता न मैं मूरती पूजा जानता हूं। मेरे गुरु ने मुझे एक बात बतादी। मैं भूला हुआ था। वह क्या बात बतादी? 'मैं भूला रे भाई। मेरे सतगुरु जुगत लखाई।" उसने कहा जब तक ऐ इन्सान! तू अपने धर्म को नहीं पालेगा, दया नहीं रक्खेगा तू अविनासी पद को नहीं प्राप्त कर सकता। अब कैसे कहूं कि कबीर सनातन धर्म के विरुद्ध था। यह श्रुत वाक्य है। जब तक कोई दया धर्म को नहीं पालता, कोई सफल नहीं हो सकता। गृहस्थियों को दया करने और धर्म पालन करने का बड़ा अवसर है। हम गृहस्थियों की हर समय परीक्षा होती रहती है। लड़का स्कूल में पढ़ता है। मास्टर लड़कों के तीसरे महीने में इम्तहान लेते रहते हैं।

यदि मास्टर इम्तहान न ले तो लड़के योग्य नहीं बन सकते। हम गृहस्थी हैं। हमारा तो इम्तहान २४ घण्टे होता रहता है। हमको अपने मन की निरख परख करने का हर समय अवसर मिलता रहता है! गृहस्थ में रहते हो। सारा दिन काम करते हो। रात को सोते समय सोचो कि आज तुमने कहाँ-कहां दया की, कहां मन थिर रहा। मैंने तुमको कहा कि दुनियां पर तुम दया करोगे? किस-किस पर दया करोगे? पहिले सबसे छोटा दायरा (वेरा) बनाओ जैसे तालाब में कंकड़ फेंकने से पहिले छोटा दायरा बनता है फिर बडा वनता जाता हैं। जो अपने घर में दया नहीं पाल सकता, वह बाहर क्या दया करेगा? एक आदमी का भाई निर्धन है। उसको तो पैसा देता नहीं मगर मन्दिर में जाकर दस हजार दान देता है। तुम उसको कहोगे बह इन्सान है? मैं कहूंगा वह इंसान नहीं है।

मैं मानवता मन्दिर में रहता हूं। मेरे पास कानपुर के रामरतन आपे उनकी दो तीन मील चलती हैं। यह दुनियाँ करामत की भूखो है। वह संत कृपालसिंह का चेला है। उसके लड़का नहीं था। संयोग की बात मैं आटे की दुकान पर काम करता था। मेरे हाथ पैर आटे में लिपटे रहते थे। उसकी स्त्री आई। मुझे पता नहीं था। कहीं मुझसे प्रसाद ले गई। उसके लडका हो गया। उसका विश्वास बैठ गया। उसको घरेलू तक-लीफ थी। कुछ मेरे कहने पर दूर हो गई। वह मेरे पास आया। कहने लगा मानवता मन्दिर में दो हजार रुपये से एक कमरा वनवाना चाहता हूं। मैंने कहा मन्दिर में किस लिये देते हो? तेरे भाई का देवाला निकल गया है। उसके ६—७ बच्चे हैं। मन्दिर में कमरा वनवाने के बजाय उसकी सहायता करो। वह

10 live in the world ?) तुम्हारी जीवन यात्रा कैसे गुजरे।

मेरी लड़की है। उसकी शादी मैंने की हुई है। उसकी सास सौतेली है। उस सास के बच्चे हैं। मैंने लड़की से बोला —बेटी एक बात करना। तू अपने पति से न कहना कि तुम क्या देते हो। अपने मां बाप को क्या नहीं दिया ! तू सुखी रहेगी। वह ऐसा ही करती है। एक देवर उसके पास पढ़ता है। उसके घर स्वर्ग है । कोई कष्ट नहीं। तो घरों में जितने झगड़े है। उसका कारण अधिकातर ऐ बेटियो ! तुम हो। यदि घर की स्त्री अच्छी समझदार है, विवेक बुद्धि वाली है, यह घर को कंट्रौल में रख सकती है। जिस पुरुष को अशान्ति है उसके जहाँ और कारण है, वहां एक कारण यह भी हैं कि स्त्री ठीक नहीं है। मैं तुमको गृहस्थ की शिक्षा दे रहा हूं क्योंकि मैं आया ही इसीलिये हूं।

हम आये आये आये हैं।
तुमको दुखी देख आँखों में, दिल में दया समाई।
दया भाव से प्रगटे जग में दया यहां ले आई।।

मगर तुम मेरी बात को नहीं सुनते। तुम उनकी सुनते हो जो तुमको लूटना चाहते हैं। मैं तुमको सत्य कह रहा हूं कि मेरे मन्दिर भगोये कपड़े वाला साधू नहीं आता। साधु है मेरे मिलने वाले अच्छे जो बड़ी आयु के हैं। वह पैंशनर है, वह आते हैं। साधु वह है जो मन को साधना करता है। गृहस्थी को इस मन को ठीक करने का जितना अवसर है उतना इन साधुओं को नहीं। तुम्हारा हर समय इम्तहान होता रहता है। तुम बाहर से आये हो। अन्दर गये। कहीं बच्चा रो रहा है। कहीं स्त्री का नाक भों चढ़ा हुआ है। हमारा गृहस्थ देखो तो सही, हम कितने

दुखी हैं ! इसका इलाज क्या है ?

दाया राख धर्म को पाले, जग में रहे उदासी । तथा
सहे कुशब्द बाद को त्यागे, छांडै गर्व गुमाना ॥

गृहस्थ में बहुत सी बातें होती हैं। स्त्री जाति देहरी होती है जो द्वार के नीचे की लकड़ी होती है ' सब आदमी उस पर पाँव रखकर चलते हैं। वह बोलती नहीं (अर्थात सहन करती है ।) इस तरह धर्म को पालो ।

मैं तुमको जीने का रहस्य बताता हूं। मेरे घर पर कितने ही आदमी दुखी आते है, जिनके घर में बारह बारह वर्ष से अशान्ति है । मेरे सत्संग सुनने से उनको शान्ति मिल जाती है। स्त्री पुरुष इकटठे हो जाते हैं । बाल—बच्चों से प्रेम होता है। कभी कभी गिरते रहते हैं। तो क्या करता हूं। मैं तुम लोगों को विवेक देता हूँ। यही दातादयाल ने अन्तिम कड़ी में कहा है :—

भूल भरम तज कर सत संगत, हिये की आंख खुलाओ ।
राधास्वामी रूप निरख कर, दया से काज बनाओ ॥

मैं सनातन धर्म पर तीन दिन से सत्संग करा रहा हूं। मैंने बताया कि अच्छी सन्तान पैदा करो। अच्छे संस्कार लो। गुण, कर्म स्वभाव के हिसाब से शादी करो। आज धर्म पर बोला। अब सनातन का धर्म और है । गायत्री मन्त्र का उपदेश देते हैं। गायत्री मन्त्र का अर्थ क्या है ? मन्त्र यह है—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तस्सवितुर्वरेण्यम् भर्गोदेवस्य धीमहिः धियोयोनः प्रचोदयात् ।

अर्थ—भूर्भुवः स्वः —जागृत स्वप्न सुषुप्त से परे जो सावित्री रूपी सूर्य तुम्हारे अन्तर में है, उसके दर्शन करो। वह

बुद्धि का प्रेरक होगा । इस गायत्री मन्त्र का भाव यह है कि हम अपने अन्तर में अपनी वृत्तियों को इकठटा करके जो ज्योति स्वरूप (प्रकाश) हमारे अन्तर है— सावित्री का अर्थ है प्रकाश ज्योति, उसके दर्शन करो । वह तुम्हारी बुद्धि का प्रेरक होगा । अब जितने धर्म सम्प्रदाय है सब नूर (प्रकाश) को मानते है । इस्लाम भी नूर (प्रकाश) को मानता । हजरत मूसा भी नूर को मानता है । पारसी भी प्रकाश को मानते हैं । हम लोगों ने, जो अन्तर का प्रकाश था, उसको बहार के यज्ञ बना लिया । जितने भी मजहब हैं सब इस गायत्री मन्त्र के अर्न्तगत है । अब मन्त्र का अर्थ तो है राय, सलाह, ख्याल देना । एक आदमी केवल जिभ्या से मन्त्र रटता है— ओ३म् भूर्भुवः स्वः..... ..... वह अपने अन्दर सावित्री को प्रकट नहीं करता । उसका जाप करने से कुछ लाभ है । यह नहीं कि बिल्कुल लाभ न हो । उसके मन की वृत्ति थोड़ी सी एकाग्र होती है मगर असली लाभ तब होता है जब कोई व्यक्ति—चाहे गायत्री मन्त्र न पढ़े, मगर राम नाम से, अल्लाह से, गोपाल कृष्ण से अथवा किसी और नाम से अपने अन्तर में साधन करे और सावित्रो (प्रकाश) को प्रगट कर ले । फिर सावित्री से उसे क्या मिलता है ? उसको बुद्धि मिलती है, विवेक मिलता है, समझ आ जाती है । हमारे शास्त्रों ने, हमारे सनातन धर्म ने यह उपदेश बच्चों को दिया था । ८—१० वर्ष के बच्चों को यह उपदेश दिया था । क्यों दिया था ? इसलिये दिये था कि वह साधन करते रहेंगे । उन बुद्धि निर्मल हो जायगी । वह बुद्धिमान जायेंगे, ज्ञान वाले हो जायेंगे । तो एक मार्ग सनातन धर्म का यह है । वह कहते हैं उसको प्राप्त करने के लिये उन्होंने हम को अपने अन्तर में साबित्री से दर्शन करने को कहा । जो बच्चे अपने अन्तर

बुद्धि विवेक नहीं रख सकते, उनको गुरु परायण कर दिया। हर एक कुल का अलग अलग गुरु हो गया था जैसे राम का गुरु वशिष्ठ, आदि। चूँकि उन बच्चों या आदमियों को जो सावित्री का साधन नहीं करते. सच्ची बुद्धि नही मिल सकती, इसलिये वह उस समय तक उन गुरुओं, पुरोहितों, आचार्यो के आधीन रहे जो सावित्री का ज्ञान रखते थे। कोई गुरु जिसके अन्तर प्रकाश नहीं होता, यदि वह उपदेश करता है, वह महा पापी हैं। कोई पण्डित जो गायत्री मन्त्र का जाप करके अपने अन्तर सावित्री प्रगट नहीं करता, वह यदि किसी दूसरे को कोई राय देता है तो वह हानि होती है। मैंने यह देखा है। मेरे पास दुनियाँ के बहुत से दुखी आदमी आते हैं या मैं जहाँ जाता हूं, हजारों आदमी मेरे पीछे फिरते हैं। क्यों ? क्योंकि मेरे अन्तर प्रकाश होता है। मैं साधारणतया प्रकाश में रहता हूं। प्रकाश में रहने से मेरी सत बुद्धि हो चुकी है। जो आदमी दुखों को, अपनी तकलीफों को मुझसे कहता हैं, उसका हल अपनी बुद्धि के अनुसार बता देता हूँ। उससे उसको फायदा पहुंच जाता है। अब मैं स्वयं हैरान होता हूं कि उसको फायदा कैसे पहुंच जाता है वह फायदा इसलिये पहुँचता है कि जिस आदमी की बुद्धि अन्तर में सावित्री रूपी प्रकाश में रहती है वह शुद्ध बुद्धि वाला होता है। वह ठीक राय दे सकता है, ठीक बात बता स ता है इसलिये सनातन धर्म में कहा है कि अन्तर में सावित्री का दर्शन करो। यह सनातन धर्म का नियम या सिद्धान्त है।

जब मैं आगे चलता जाऊँगा। इसके नियम है। चूँकि जीव स्वयं सावित्री को प्राप्त नहीं कर सकते तो जब तक वह उस सावित्री के अपने अन्तर दर्शन नहीं करते, उस समय तक उन को क्या आदेश है ? उनको आदेश है कि अपने गुरुओं, आचार्यों या अपने पन्थों के आचार्यों के आदेश के आधीन रहें।

शेष अगले अंक में

मर्म संदेश से—

मध्य मार्गी सदा सुखी

महर्षि शिवव्रतलाल बर्मन

"मध्य मार्गी सदा सुखी" अर्थात् बीच की राह से चलने वाला और समता का ध्यान रखने वाला सदा सुखी रहता है और उसके जीवन के आदेश की पूर्ति भी सुगमता के साथ होती है। यह संतों का उपदेश है। यह बौद्धों की शिक्षा है। दायें बायें से बचो। केवल बीच की राह पर चलो और गुरू की कृपा से तुम्हारा कल्याण होगा।

इसी मध्य मार्ग को 'सहजपंथ' कहते हैं। इसके साधन से सहज वृत्ति आती है अर्थात् सहज समाधि की अवस्था प्राप्त होती है। जो इस मार्ग पर नहीं चलते उनका परिश्रम निष्फल जाता है और वह दुखी होते हुए लज्जित होते हैं। कबीर साहिब की बाणी है :—

"सहज सहज सब कोइ कहे, सहज न जानै कोय।
जा सहजे साहिब मिलें, सहज कहावै सोय ॥"

बच्चों के व्यवहार से सच्चाई और सहज अवस्था का उपदेश लो। माँ की छाती से होंठ लगे हुये हैं। दूध सहज रीति से निकल कर पेट में जाता है और उसी से बालक के शरीर का पालन-पोषण होता है। दाँत गढ़ाओ, लुहू निकल आयेगा और बच्चे की शारीरिक अवस्था के लिये हानि कारक होगा। बच्चा बीमार पड़ जायेगा और फिर दवा इलाज से काम लेना पड़ेगा। दूध जब मिलेगा सहज रीति से मिलेगा। खींचतान करने से या तो रक्त निकलेगा या पानी, और दोनों ही हानिकारक होंगे।

"सहज मिले तो दूध सम, माँगा मिले सो पानी।
कहैं कबीर वह रक्त सम, जा में ऐंचातानी।"

ऊपर पानी है। नीचे तलछट है। सार वस्तु केवल बीच में है। हंस का ढंग सीखो। इधर पानी को छोड़ो, उधर तलछट से मुँह मोड़ो

और चोंच को बीच में डुबाओ। दूध दूध पी लो, पानी तलछट को छोड़ दो।

"पानी तज तलछट तजै, चोंच दूध में लाय।
सधू हंस गति गहै, सहजहिं काथ बनाय ।।"

जीवन का प्रवाह सहज सहज में है। कोई जल्दी सयाना (युवा) नहीं होता। काम सहज रीति में सुगमता के साथ होना चाहिये। यदि व्यर्थ हाथ पाँव मारा जाता है तो परिणाम बुरा होगा और अन्त में लज्जित होना पडेगा।

"काहे को कलपत फिरै, दुखी होत बेकार।
सहजे सहजे होयगा, जो रचिया कर्तार ।।"

लोक का काम हो या परलोक का, सब में समता का ध्यान रखना आवश्यक है। जो जल्द चलता है उसके थक जाने का डर रहता है जो धीरे-धीरे चलता है उसके ठिकाने तक पहुँचने में खटका रहता है। सम्भव है दिन डूब जाये और वह ठिकाने तक न पहुंच सके। इसलिए काम करने के लिए समता का ध्यान रखना अति आवश्यक और लाभ दायक है। इसमें न खींचा तानी का डर है न निराशता का भय है। न संसार से भागो न संसार के होकर रहो। इन दोनों के बीच की राह पर चलो।

भजूं तो को है भजन को ? तजूं तो को है आन ?
भजन तजन के मध्य में, सो कबीर मन मान ।।

धर्म और अधर्म किसी से भी गहरा सम्बन्ध न हो। न बहुत बोलो न बहुत चुप रहो। मध्य मार्गी बनो। फिर तुम्हारा काम आप ही आप होता रहेगा।

'हिन्दू कहैं तो हूँ नहीं, मुसलमान भी नाँह।
पाँच तत्व का पुतला, गूँबी खेले माँह ।।
अति का भला न बोलना, अति की भली न चुप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धप ।।

लोग हमसे बार बार पूछते हैं कि कौनसा मार्ग ग्रहण किया जाये जिसकी सहायता से साक्षात्कार जल्द हो। हम भी उनको बार-बार यही उत्तर देते हैं कि तुम बिचली सहज राह पर चलो, इसी में भलाई है। परन्तु बहुत कम लोग इस उत्तर की समझ रखते हैं। प्रश्न यह है कि आत्मिक दृष्टि में यह सहज मार्ग क्या है ? उत्तर यह है कि वह 'सुरत शब्द योग' और 'सुरत शब्द मार्ग' है। संसार में जितने योग और साधन प्रचलित हैं वह कठिन, हानिकारक और अपूर्ण हैं। यह सहज, सुगम और पूर्ण है। हमारे यहाँ यह सारे साधन और अभ्यास का सार समझा जाता है। मुसलमान सूफी इसे सुलतानुलअज़्कार कहते है जिसका अर्थ है — 'ज़िक्रों का बादशाह।' यह उसकी महिमा है। कहने वाले तो बात को स्पष्ट रूप से कह गये परन्तु एक ओर साधन हीन विद्वानों ने गूढ़ परिभाषायें गढ़कर इसे कठिन बतलाने का यत्न किया। दूसरी ओर पक्षपाती और हठ धर्मी मनुष्यों ने न्याय के गले पर छुरी चलाकर आप तो स्वयं उससे बंचित रह गये और नाना प्रकार की अनसमझियाँ फैलाकर दूसरों को भी उससे लाभ नहीं उठाने दिया। यह सिलसिला अब तक बराबर चला आता है। केवल कोई अधिकारी ही इधर झुकता है। और लोग कोरे के कोरे रह जाते हैं। एक ओर रूखे फीके तपस्वी तपस्या की महिमा गाते हुए मालिक के दिये हुए पदार्थों से विमुख होकर अपने मन बुद्धि और स्वभाव को रूखा-फीका बना लेते हैं और बुद्धि विवेक से कोसों दूर जा पड़ते है। दूसरी ओर संसारी मनुष्य हैं जो एक दम भोग-विलास में फँसकर सूक्ष्म इन्द्रियों के सुख और आनन्द को खो बैठते हैं। यह दोनों ही सच्चाई से बहुत परे हैं। बिचली राह पर वे नहीं चलते जिसमें किसी प्रकार की खींच-तान नही है। यह शिक्षा हमें मधु की मक्खी से लेना चाहिए जो खिले हुए फूल पर बैठकर रस ले लेती है और पंखड़ियों पर अपने पाँव का धब्बा नहीं छोड़ती। गुरु की बाणी है :—

साधू ऐसा चाहिये, जैसे सूप स्वभाय ।
सार-सार को गह रहे, थोथा देय उड़ाय ॥

सूप या छाज की तरह केवल नाज-नाज को तो फटक पछोड़ कर ले लो और भूसी को उड़ा दो । काम की वस्तु हाथ में आये वे काम को उड़ जाने दो । संसार व्यवहार में भी ऐसा ही बर्तना चाहिए । यह असली सन्त मत है और यही मध्य मार्ग या बिचली राह है :—

"अवगुण को तो ना गहै, गुण ही को ले बीन ।
घट-घट महकै मधुप ज्यों, परमातम ले चीन्ह ॥"

दोष और बुराई को त्याग करता हुआ केवल गुण को चुनता रहे । भँवरा सुगन्ध के घड़ों पर मँडलाता हुआ उसकी बास को तो ले लेता है और तलछट को हाथ तक नहीं लगाता । तुम भी इसी प्रकार घट-घट में जो परम तत्व व्यापक हो रहा है उसको परखो और परमात्मा को पहचानो ।

"हंसा पय[1] को काढ़ ले, छीर[2] नीर निरुआर[3] ।
ऐसे गहै जो सार को, सो जन उतरे पार ॥"

हंस का गुण है कि दूध और पानी को अलग करके केवल दूध को पी लेता है और पानी को छोड़ देता है । इसी प्रकार जो लोग सार को ग्रहण कर लेते हैं वह सहज में भवसागर से पार हो जाते हैं । परन्तु संसारियों की चाल क्या है ? वह मक्खी की तरह दुर्गन्धि को प्रिय समझते हैं । अपने आपको धार्मिक कहने वाले धर्म के नाम पर नाना प्रकार की बुराइयाँ फैलाते हैं । संसारी मनुष्य संसार के कुत्ते बनकर अपने आप को और दूसरों को भी हानि पहुँचाते हैं । जिस पंथ या धर्म (मज़हब) में व्यर्थ खण्डन मण्डन देखो समझ लो कि इनमें विष्टा की मक्खियों का गुण है । संतों का मार्ग (पन्थ) इनसे कोसों दूर है और इनको उसकी हवा तक नहीं लगती । ऐसे लोगों के विषय में परम संत कबीर साहिब की वाणी है :—

(१) दूध । (२) क्षीर=दूध । (३) अलग करके ।

"कबीर कीट सुगन्ध तज, नर्क गहै दिन रात।
तैसेहि मनुष असार[४] गह, गहै असारहि बात ॥"

कीड़ा सुगन्ध को छोड़कर रात दिन दुर्गन्ध पर मरता है। ऐसे ही असार का ग्रहण करने वाला मनुष्य व्यर्थ बातों में अपना अमूल्य जीवन नष्ट कर देता है।

'आटा तज भूसी गहै, चलनी देख निहार।
कबीर सारहि छाँड़ि कर, करै असार अहार ॥"

छन्नी (चलनी) क्या करती है? बारीक और अच्छा आटा तो छनकर नीचे गिर जाता है, केवल भूसी-भूसी उसमें पड़ी रह जाती है। ऐसे अविवेकी मनुष्य तत्व को छोड़कर केवल व्यर्थ बातों पर ध्यान देते हैं।

'रसहि छाँड़ि छोही गहै, कोल्हू परतछ देख।
गहै असारहि सार तज, हृदय नाहिं विवेक ॥'

कोल्हू क्या करता है? रस को निथार कर नीचे बहा देता है और आप गन्ने की सूखी छोही को रख लेता है। इसी प्रकार जो लोग ज्ञान हीन और अविवेकी हैं उनकी दृष्टि तत्व पर नहीं रहती। वह असार (तलछट) ही पर जान देते हैं।

यह बातें तो हो चुकी परन्तु प्रश्न का एक अंग ज्यों का त्यों रह गया। यह 'सहज योग' कैसे किया जाता है? और इसे मध्य मार्ग का नाम क्यों दिया गया? इसके उत्तर में संक्षेप रीति से केवल इतना ही कहने की आवश्यकता है कि नदी के दोनों किनारों पर कीचड़ और कूड़ा करकट रहता है, ठंडा और सुथरा पानी केवल बीच में दिखलाई देता है। इस भवसागर के दो किनारे हैं – एक लोक दूसरा परलोक। या तुम यों कहो—एक ओर शरीर के सुख देने का ध्यान और दूसरी शरीर को कष्ट पहुँचाने का विचार। यह दोनों ही व्यर्थ हैं। मध्य मार्ग में न शरीर को बहुत सुख मिलेगा और न उसे बहुत दुःख उठाना

(४) झूठ व्यर्थ।

पड़ेगा। दोनों का सार तत्व हाथ में रहेगा। इंगला पिंगला को छोड़कर सुषुम्णा में चलना होगा। यह तीनों शब्द योग विद्या के सम्बन्ध में बहुत ही प्रसिद्ध और प्रचलित हैं। इतना ही नहीं साधन के समय इनसे काम भी लेना पड़ता है और जब तक (सुरत) रूह को मध्य मार्ग में ठहरा कर चक्रों को बेधते हुये आगे बढ़ने की इच्छा नहीं होती, तब तक आत्मिक उन्नति के दृश्य भी आँखों के सामने नहीं आते। प्रश्न के एक अङ्ग का उत्तर तो यह हुआ। दूसरा अङ्ग यह है कि यह सहज योग कैसा है? इसका भी उत्तर सुन लो। इसमें न किसी प्रकार का बन्धन है न परिश्रम और न व्यर्थ बात का बतंगड़ा बनाया जाता है। न यहाँ तीर्थ है न व्रत है। अपने घट में सुगमता के साथ बैठकर मालिक का नाम जपना पड़ता है। कर्म-धर्म में तो फिर भी बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ होती हैं—रोज़ा नमाज़ का बन्धन, पूजा-पाठ यमनियम और तीर्थ व्रत के रगड़े-झगड़े, नियत समय का ध्यान रखना, सामग्री को एकत्रित करना इत्यादि इत्यादि। इस योग के साधन में इनकी कठिनाई नहीं सताती। नाम लेने में कौन सा परिश्रम करना पड़ता है? क्या नाम का जाप भी दुख का कारण होता है? नहीं! कभी नहीं!! इसे साधारण मनुष्य भी समझ सकता है। फिर इस नाम लेने में जिव्हा तक हिलानी नहीं पड़ती। जो कुछ होता है आप ही होता रहता है। केवल ध्यान देने की देर है। ध्यान देते ही साक्षात्कार होने लगता है। इसीलिये इसका नाम सहज योग है। गुरु की वाणी है :—

'सहजे ही धुन होत है, हरदम घट के माँहि।
सुरत शब्द मेला भया, मुख की हाजत नाँहि॥'

अपने अन्तर में आप ही आप धुनि(ध्वनि) हो रही है सुरत (रूह) को शब्द (आवाज) के साथ मिला दो। जिव्हा तक हिलाने की आवश्यकता नहीं रही।

अन्तर का शब्द बहुत ही रसीला होता है। वह आप ही आप सुरत को अपनी ओर खींचे रखता है। इसलिये उसकी ओर ध्यान देने

में भी कोई कष्ट नहीं होता। शब्द में बहुत बड़ी आकर्षण शक्ति है जिसे सर्वसाधारण तक जानते हैं। बीणा (बीन बाजा) और सितार के बजते ही मन आप उसकी ओर खिच जाता है। जब संसार के बाजों की यह दशा है तो फिर बताओ अन्तर का शब्द कैसा बलवान और आकर्षण करने वाला होगा! हाँ, ध्यान देने की देर है। ज्यों ही चित्त लगने लगेगा, एकाग्रता आप आती जायेगी और एकाग्रता का सच्चा आनन्द भी प्राप्त होने लगेगा। क्या इसके भी बताने और समझाने की आवश्यकता है? यह तो मनुष्य के निज अनुभव की बात है। इस सहज योग में बस इतना ही करना पड़ता है। इसी को सच्चे नाम का सच्चा सुमिरन कहा जाता है और कलियुग का धर्म भी इतना ही बताया गया है। रामायण के ग्रंथकार गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज की पवित्र वाणी है :—

'ध्यान प्रथम युग मख युग दूजे।
द्वापर परितोषित प्रभु पूजे॥
कलि केवल यक नाम अधारा।
वेद पुराण संत मत सारा॥

सतयुग में ध्यान, त्रेता में यज्ञ हवन, द्वापर में मूर्ति पूजा और कलियुग में केवल नाम का आधार है। यह वेद पुराण और संत मत का सार है।

यह नाम वास्तव में वही है जिसका वर्णन हम ऊपर से करते आ रहे हैं। असली नाम धुन (ध्वनि) है जो हमारे अन्तर में गूँज रही है। भेद केवल इतना है कि औरों ने पर्दा देकर केवल सच्चे अधिकारियों को उसका उपदेश दिया और हम खुल्लम-खुल्ला स्पष्ट शब्दों में उसकी व्याख्या कर देते हैं मानना न मानना उनका काम है। इसी को नाम योग भी कहा जा सकता है। इसका दूसरा नाम अनहद योग भी है। अब यदि लोग नाम लेने, नाम योग के साधन करने और इस धुनात्मक नाम के जपने से घबराते और कतराते हैं तो फिर हम क्या करें? और

कोई क्या करे ? युक्ति सहज और साधारण है। स्त्री पुरुष बच्चे बूढ़े आप करके देख सकते हैं। इस पर भी कोई न समझे तो कहना पड़ता है कि वह काल कर्म के चक्कर में है।

इस अनहद शब्द के अभ्यास से क्या लाभ होता है ? इसका उत्तर हम संसार के सारे धर्मों के सदग्रन्थों से दे सकते हैं। जिसका जी चाहे पूछ सकता है। यहाँ हम आपको केवल गुरु वाणी सुनाते हैं। ध्यान के साथ सुनिये :—

१. गगन मंडल के बीच में, जहाँ सोहंगम डोर।
शब्द अनाहद होत है, सुरत लगी तहाँ मोर ॥१॥

२. कबीर ! कमल प्रकाशिया, ऊँगा[१] निर्मल सूर[२]।
रैन अँधेरी मिट गई, बाजे अनहद तूर ॥ २ ॥

३. निझर झरै अनहद बजै, तब उपजै ब्रह्म ज्ञान।
अवगति अन्तर प्रगटई, लगा प्रेम निज ध्यान ॥३॥

४. सुन्न मंडल में घर किया, बाजै शब्द रसाल[३]।
रोम रोम दीपक भया, प्रगटे दीन दयाल ॥४॥

५. कबीर ! शब्द शरीर में, बिन गुन[४] बाजै तांत।
बाहर भीतर रम रहा, ताते छूटे भ्रान्त ॥५॥

६. शब्द शब्द बहु अन्तरा[५], सार शब्द चित दे।
जा शब्दे साहब मिलें, सोइ शब्द गह ले ॥६॥

७. शब्द शब्द सब कोइ कहै, वह तो शब्द विदेह[६]।
जिव्हा पर आवै नहीं निरख परख कर लेह ॥७॥

८. शब्द विना सुरत आँधरी, कहो कहाँ को जाय।
द्वार न पावे शब्द का, फिर फिर भटका खाय ॥८॥

९. कस्तूरी नाभी बसै, मृग ढूँढ़ै बन माँहि।
ऐसे शब्द घट में बसै, दुनिया जानै नाँहि ॥९॥

---

(१) निकला। (२) सूर्य्य। (३) रसीला। (४) रस्सी। (५) भेद। (६) बिना शरीर का।

इन दोनों की व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। इनसे शब्द अभ्यास के लाभ का पता लगता है। यही शब्द योग आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने का मध्य मार्ग है। जो चाहे वह इसको कमाई करें। जो नहीं चाहते उनसे क्या कहा जाये ! हमने बहुत ही खोल खोलकर स्पष्ट रूप से व्याख्या कर दो। साधन भी इतना सहज और सुगम कर दिया गया कि अधिकारी थोड़े ही दिन के अभ्यास से लाभ उठाने लग [redacted] है। जिनको अभ्यास करते हुये बहुत दिन हो गये और कुछ [redacted] पहुंचा उनके विषय में समझ लो कि उन्होंने किसी से पूरा [redacted] लिया और न सतसंग किया नहीं तो यहाँ तिल की ओट पहाड़ इससे अधिक और क्या कहा जाये ! समझ हो तो तुम समझ बूझ इससे लाभ उठाओ और इस विचली राह से चलते हुये इसी जन्म अपना काम बना लो। आगे मालिक जाने क्या हो ! अवसर से लाभ उठाना बुद्धिमानों का काम है।

१. काल करे सो आज कर, आज है तेरे साथ।
काल काल तू क्या करे, काल है काल के हाथ ॥

२. काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगा कब ॥

सबको राधास्वामी !

धन्यवाद

श्री नरेन्द्रसिंह दहिया (दिल्ली) ने अपने पुत्र की बीमारी ठीक होने के उपलक्ष में 'मनुष्य बनो की सहायतार्थ १०० भेजें हैं। मालिक से प्रार्थना है कि वह उनके पुत्र को अच्छा स्वस्थ और दीर्घ आयु प्रदान करे।

[२] श्रीमती रामचन्द्र आ० प्रदेश ने श्री रामचन्द्र जी के स्वर्गवास पर १००) 'मनुष्य बनो' के लिये भेजा है। मालिक से कामना है कि श्रीमती रामचन्द्र को इस असहाय दुख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे एवं श्रीरामचन्द्र जी की आत्मा को शांति प्रदान करे। यह रुपया हमें मनीआडेर द्वारा हजूर आनन्दराव जी की मार्फत प्राप्त हुआ।

—प्रकाशक

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य १०—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

Regd. No. L-ALG-28

पुस्तकें

हमारे यहां
[म]हर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज
कृत
हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक,
स्त्री उपयोगी,
स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी
[प]ुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती'
सिलसिले के उपन्यास तथा
[प]रमदयाल फकीरचन्द जी महाराज
कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें
मिलती हैं।
पूरा सूचीपत्र मंगायें।
खर्च सब का अलग है।
[पुस्त]क रजिस्टर्ड डाक या रेल से
भेजी जाती हैं।

...ा पता :—
...य
...
...नगर,
...।,

ग्राहक सं० 980
श्री Yamfally ... Gunda Rao
V. Jangi (K)
P.O. Tadkal via Pitlam
Dist - MEDAK AP
503310

प्र० मै० ... मीतल
व्यवस्थापक — ...
श्री ...
शिव भवन, ...
अलीगढ़